© Maulana Azad National Urdu University, Hyderabad

Course : Master of Arts

ISBN 978-XX-XXXXX-XX-X

Edition : जनवरी, 2022

प्रकाशक	:	रजिस्ट्रार, मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद
प्रकाशन	:	जनवरी, 2022
मूल्य	:	170/-
प्रतियां	:	1000
कम्पोजिंग	:	एस पी हाई-टेक प्रिंटर्स प्राइवेट. लिमिटेड. हैदराबाद
डिजाइनिंग एंड सटिंग	:	डॉ. मो. अकमल ख़ान, दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू युनिवर्सिटी, हैदराबाद
मुद्रक	:	एम्/एस. प्रिंट टाइम & बिज़नेस इंटरप्राइसेस, हैदराबाद

हिंदी साहित्य का इतिहास

(History of Hindi Literature)

For M.A. 1st Semester

On behalf of the Registrar, Published by:

Directorate of Distance Education

Maulana Azad National Urdu University

Gachibowli, Hyderabad-500032 (TS), Bharat

Director: dir.dde@manuu.edu.in *Publication:* ddepublication@manuu.edu.in

Phone number: 040-23008314 Website: manuu.edu.in

इकाई- 2 रीतिकाल की प्रमुख काव्य धाराएँ

इकाई की रूप रेखा

2.0 **उद्देश्य**
2.1 **प्रस्तावना**
2.2 **रीतिकाल की प्रमुख काव्य धाराएँ**
- **2.2.1** रीतिबद्ध काव्यधारा
- **2.2.2** रीतिसिद्ध काव्यधारा
- **2.2.3** रीतिमुक्त काव्यधारा

2.3 **रीतिकाल की अन्य काव्य धाराएँ**
- **2.3.1** नीतिकाव्य
- **2.3.2** प्रशस्ति या वीरकाव्य
- **2.3.3** भक्ति काव्य

2.4 **रीतिकालीन गद्य**
2.5 **सारांश**
2.6 **बोध-प्रश्न**
2.7 **बोध-प्रश्नों के उत्तर**
2.8 **पठनीय पुस्तकें**

2.0 उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप यह समझ पाएँगे कि :

- रीतिकाल के दौरान रची जा रही साहित्यिक रचनाओं को साहित्य के इतिहासकारों और आलोचकों ने किन काव्यधाराओं के अन्तर्गत रखा है?
- काव्यधाराओं के इस विभाजन के आधार क्या हैं?
- कौन से कवि किस काव्यधारा से सम्बन्ध रखते हैं?
- रीतिकाल में मुख्य धाराओं के अतिरिक्त कौन-सी गौण धाराएँ उपस्थित थीं और इन धाराओं के अंतर्गत कौन-से कवि किस तरह की रचनाएँ कर रहे थे?

2.1 प्रस्तावना

हिन्दी साहित्य के इतिहासकार आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने हिन्दी साहित्य के इतिहास के उत्तर मध्यकाल का नामकरण 'रीतिकाल' किया है। यह नामकरण इस मान्यता से प्रेरित है कि इस काल में काव्य रीति अथवा काव्य परिपाटी में रचना करना साहित्यकारों की प्रधान प्रवृत्ति हो गयी थी। काव्यरीति अथवा काव्य परिपाटी से रचना करने का अर्थ है, संस्कृत काव्यशास्त्र के आचार्यों द्वारा स्थापित सिद्धांतों का अनुसरण करते हुए रचनाएँ करना। यह अनुसरण भी रीतिकाल में कई तरीकों से हुआ। कुछ कवियों ने संस्कृत काव्यशास्त्र के विभिन्न आचार्यों के काव्यांग विवेचना को सरल ब्रज भाषा में बताकर उदाहरण प्रस्तुत करने के लिए अपनी रचनाएँ रची तो कुछ कवियों ने काव्यशास्त्र के नियमों का पालन करते हुए अपनी रचनाएँ रची। कुछ कवियों ने इस तरह की परिपाटी से स्वयं को मुक्त रखते हुए भी रचनाएँ कीं। साहित्य के इतिहासकारों और आलोचकों ने मुख्यतः रीतिकाल में मौजूद इसी तरह की काव्य-प्रवृत्तियों और कुछ अतिरिक्त काव्य प्रवृत्तियों को ध्यान में रखते हुए इस काल की रचनाओं को विभिन्न श्रेणियों में रखकर चर्चा की है। आगे हम इन सभी बिन्दुओं पर विस्तार से चर्चा करेंगे।

2.2 रीतिकाल की प्रमुख काव्य धाराएँ

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने ग्रंथ 'हिन्दी साहित्य के इतिहास' में रीतिकाल की काव्यधाराओं का कोई बहुत स्पष्ट विभाजन नहीं किया है। उन्होंने चर्चा के लिए रीति ग्रंथकार कवियों के अतिरिक्त एक श्रेणी इस काल के अन्य कवियों की बनायी है। उन्होंने अन्य कवियों की श्रेणी की भूमिका में कुल 6 प्रधान वर्गों का उल्लेख अवश्य किया है, लेकिन उन्होंने कवियों को इन वर्गों में विभाजित कर के उन पर चर्चा करना उचित नहीं समझा है । इससे स्पष्ट होता है कि 'रीतिकाल के अन्य कवियों' के प्रधान वर्गों के उल्लेख का उनका उद्देश्य उन कवियों की रचनात्मक विविधता को उजागर करना रहा होगा।

परवर्ती साहित्य इतिहासकार आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने हिन्दी साहित्य के उत्तर मध्यकाल की रचनाओं को मुख्यतः तीन धाराओं में विभाजित किया है । आचार्य मिश्र ने अपने ग्रंथ 'हिन्दी साहित्य का अतीत' में उत्तर मध्यकाल को 'रीतिकाल' कहने के बजाय 'श्रृंगार काल' कहना उचित समझा है, लेकिन इसके बावजूद काव्यधाराओं का उनका विभाजन 'रीति' केन्द्रित ही है । इसका अर्थ यह हुआ कि उत्तर मध्यकाल में काव्यशास्त्र की परिपाटी अथवा रीति के अनुसरण की प्रवृत्ति को ही मुख्य मानकर उन्होंने इस काल की मुख्य काव्यधाराओं का नामकरण किया है । कुछ अपवादों के अतिरिक्त उनके बाद के साहित्य इतिहासकारों ने भी थोड़े-बहुत मतभेद के साथ इसी विभाजन को स्वीकार किया है । ये तीन मुख्य काव्य धाराएँ निम्नलिखित हैं :

- रीतिबद्ध काव्यधारा
- रीतिसिद्ध काव्यधारा
- रीतिमुक्त काव्यधारा

2.2.1 रीतिबद्ध काव्यधारा

इस नाम से ही स्पष्ट है कि इस काव्यधारा को 'रीति' से बंधी हुई काव्यधारा माना गया है । आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र के अनुसार इस धारा के अंतर्गत वे कवि आते हैं, जिन्होंने प्रकट रूप से काव्यांग निरूपण के लिए रचनाएँ कीं । 'काव्यांग-निरूपण' का सरल अर्थ है – काव्यशास्त्र के आचार्यों द्वारा प्रतिपादित कविता के विविध अंगों को उदाहरण सहित प्रस्तुत करना । विभिन्न रसों, अलंकारों, छंदों आदि के लक्षण बताकर उनके उदाहरण स्वरुप जो रचनाएँ रची गयीं, वे रीतिबद्ध काव्यधारा के अंतर्गत आती हैं । इन कवियों को 'लक्षण-ग्रंथकार' भी कहा जाता है । इन कवियों ने काव्यांग निरूपण के लिए संस्कृत काव्यशास्त्र से सम्बंधित जिन ग्रंथों का अनुसरण किया, उनमें से प्रमुख माने जाने वाले ग्रंथ हैं - जयदेव की कृति 'चंद्रालोक', अप्पय दीक्षित की कृति 'कुवलयानंद', मम्मट कृत 'काव्यप्रकाश' और विश्वनाथ की कृति 'साहित्य दर्पण' ।

रामचंद्र शुक्ल ने इन कवियों को 'रीतिग्रंथकार कवियों' की संज्ञा दी है । डॉ. नगेन्द्र इन कवियों को रीतिबद्ध कवि कहने के पक्ष में नहीं हैं, बल्कि वे इन्हें 'रीतिकार' या 'आचार्य कवि' कहना उचित मानते हैं । यहाँ यह उल्लेख करना आवश्यक है कि रीतिबद्ध धारा को लेकर जो विश्वनाथ प्रसाद मिश्र की मान्यता रही है, वही अधिकांश विद्वानों के लिए स्वीकृत मान्यता रही है ।

इस काव्यधारा के सभी प्रमुख रचनाकारों के बारे में एक सामान्य बात यह रही है कि लगभग ये सभी कवि राज्याश्रित रहे हैं । इसलिए यह माना जाता है कि इन कवियों की रचनाओं का उद्देश्य अपने आश्रयदाता राजाओं के समक्ष अपने काव्यशास्त्रीय ज्ञान से युक्त कवित्तशक्ति का प्रदर्शन करना था । इसके अलावा उनकी रचनाओं का उद्देश्य आश्रयदाता की

रुचियों को ध्यान में रखकर उन्हें मनोरंजन उपलब्ध करवाना भी होता था । इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए कई बार इन कवियों को अपने कौशल का उपयोग काव्य प्रशिक्षण देने के लिए भी करना पड़ता था । उदाहरण के लिए केशवदास के ग्रन्थ 'कविप्रिया' का उल्लेख किया सकता है । केशवदास ओरछा नरेश इन्द्रजीत के दरबार में रहते थे । ऐसा माना जाता है कि उन्होंने अपने इस ग्रन्थ की रचना दरबार की प्रधान नर्तकी प्रवीण राय को कविता की शिक्षा देने के उद्देश्य से की थी । यह कहा जा सकता है कि काव्यांग निरूपण (जिसमें विभिन्न रसों, छंदों, अलंकारों आदि के विषय में संस्कृत के काव्यशास्त्रीय विद्वानों के मतों को पहले कवित्त में बताया जाता था और फिर उसके उदाहरण दिये जाते थे) का एक उद्देश्य सरल लोक भाषा में संस्कृत काव्यशास्त्र की परिपाटी अथवा रीति कविता की शिक्षा देना भी था । उदाहरण के लिए इस तरह का एक पद केशवदास की कृति 'छंदमाला' से उद्धृत किया जा सकता है, जिसमें सुप्रिय छंद का लक्षण उन्होंने इस तरह बताया है - **"चौदह लघु गुरु एक अरु सुप्रिय छंदप्रकास ।/ अक्षर प्रतिपद पंचदस आनहु केसवदास । ।"**

लक्षण निरूपण की प्रक्रिया को समझने के लिए महाराज जसवंत सिंह की कृति 'भाषाभूषण' का यह एक दोहा देखें- **"अलंकार अत्युक्ति यह, बरनत अतिसय रूप ।/ आचक तेरे दान तें, भए कल्पतरु भूप । ।"** इस दोहे में अत्युक्ति अलंकार को उदाहरण सहित समझाया गया है । पहली पंक्ति में लक्षण और दूसरी पंक्ति में उदाहरण आया है । पहली पंक्ति में यह बताया गया है कि अत्युक्ति अलंकार वहाँ होता है जहाँ किसी बात को बहुत बढ़ा-चढ़ाकर कहा जाए । दूसरी पंक्ति में इसका उदाहरण इस तरह दिया गया है कि याचक को देने के लिए राजा कल्पतरू हो गये हैं । कल्पतरु एक लोकरूढ़ी है, जिसका आशय एक ऐसे वृक्ष से है, जिससे जो भी कामना की जाए वह तत्काल पूरी हो जाती है । एक राजा को कल्पतरु कहना उसकी बहुत बढ़ा चढ़ाकर की गयी प्रशंसा है, क्योंकि ऐसा वास्तव में हो सकना संभव नहीं हैं । एक ही पंक्ति में लक्षण उदाहरण का यह अनोखा संयोजन कुछ ही कवियों की रचनाओं में मिलता है । लक्षण ग्रंथकार कवियों ने सामान्यतः पहले स्वतंत्र रूप से लक्षण कहे हैं, और फिर उदाहरण के लिए अलग से पद रचना की है ।

रामचंद्र शुक्ल ने रीति ग्रंथकार कवियों का उल्लेख करते हुए लिखा है कि इन कवियों ने कविता लिखने की एक प्रणाली ही बना ली कि पहले दोहे में अलंकार या रस का लक्षण लिखना फिर उसके उदाहरण के रूप में कविता का सवैया लिखना । शुक्ल जी ने इसे अनूठा दृश्य कहा है । उन्होंने लिखा है कि संस्कृत साहित्य में कवि और आचार्य दो भिन्न-भिन्न श्रेणियों के लोग रहे जबकि हिंदी काव्य क्षेत्र में यह भेद लुप्त सा हो गया ।

हिन्दी साहित्य के अधिकांश इतिहासकारों का यह मानना रहा है कि काव्यांग निरूपण के उदाहरण के लिए मौलिक रचनाएँ रचने के कारण ये रचनाकार मूलत: कवि ही थे, जिन्होंने काव्यांग निरूपण को अपनी काव्य रचना के आलम्बन के रूप में उपयोग किया । इस पद्धति से रीतिकाल में प्रचुर मात्रा में रचनाएँ हुईं । यह कहा जा सकता है कि इस धारा के कवियों में जो आचार्यत्व था, वह एक तरह से उनकी मौलिक काव्यप्रतिभा की अभिव्यक्ति में सहायक ही सिद्ध

हुआ । इन कवियों ने अपने आचार्यत्व के बल पर कोई नवीन स्थापना की हो अथवा पूर्व के उपलब्ध ज्ञान में कोई विस्तार किया हो इसके प्रमाण नहीं मिलते लेकिन रस, अलंकार, छंद आदि के लक्षण निरुपण के क्रम में इन कवियों ने अनेक ऐसी रचनाएँ की जिन्हें पर्याप्त लोकप्रियता और सराहना मिली ।

इस धारा के कुछ प्रमुख कवि और उनकी कुछ कृतियों के नाम निम्नलिखित हैं:

- **केशव** : 'रसिकप्रिया', 'रामचंद्रिका', 'कविप्रिया', 'जहाँगीरजसचन्द्रिका' आदि ।
- **चिंतामणि** : 'काव्य विवेक', 'कविकुलकल्पतरु', 'काव्यप्रकाश' आदि ।
- **पद्माकर** : 'हिम्मतबहादुर विरुदावली', 'जगद्विनोद','पद्माभरण' 'गंगालहरी' आदि ।
- **देव** :'भावविलास', 'अष्टयाम', 'भवानीविलास', 'काव्यरसायन' आदि ।
- **मतिराम** : 'ललितललाम' 'छंदसार','साहित्यसार','लक्षणश्रृंगार' आदि ।
- **जसवंत सिंह**: 'भाषाभूषण', 'अनुभवप्रकाश', 'आनंदविलास', 'प्रबोधचंद्रोदय नाटक' आदि ।
- **भिखारी दास** : 'रससारांश', 'काव्यनिर्णय', 'नामप्रकाश कोश', 'छंदप्रकाश' आदि ।
- **दूलह** : 'कविकुलकंठाभरण' ।
- **ग्वाल कवि** : 'यमुनालहरी', 'भक्तभावना', 'रसिकानंद', 'रसरंग', 'दूषणदर्पण' आदि ।
- **प्रतापसाहि** : 'व्यंग्यार्थकौमुदी', 'काव्यविलास', 'काव्यविनोद', 'श्रृंगारशिरोमणि' आदि ।

2.2.2 रीतिसिद्ध काव्यधारा

आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र के अनुसार रीतिसिद्ध काव्यधारा के अंतर्गत वे कवि आते हैं जिन्होंने संस्कृत काव्यशास्त्र की परिपाटी का अनुसरण करते हुए ही रचनाएँ कीं लेकिन जिन्होंने किसी लक्षण-ग्रन्थ की रचना नहीं की । यानी इन कवियों ने रीति का पालन करते हुए भी काव्यांग निरूपण के उदाहरण के लिए अपनी रचनाएँ नहीं रचीं बल्कि इनकी रचनाएँ स्वतंत्र थीं ।

आचार्य मिश्र ने इस काव्यधारा को रीतिसिद्ध कहने का आशय इस तरह स्पष्ट किया है कि इस धारा के कवियों ने रीति परम्परा सिद्ध कर ली थी । इसका अर्थ यह हुआ कि वे रीति के मर्मज्ञ थे उसके अनुसरण को भी अपना दायित्व समझते थे, लेकिन अपनी कविताओं के अतिरिक्त अलग से इनका प्रदर्शन करना उनका ध्येय नहीं था । आचार्य मिश्र ने इस धारा के एकमात्र कवि के रूप में **बिहारी** (कृति : 'बिहारी सतसई') का उल्लेख किया है । कुछ साहित्य इतिहासकार इस धारा में **सेनापति**('कवित्त रत्नाकर', 'काव्य कल्पद्रुम') और **द्विजदेव** ('श्रृंगारबत्तीसी', 'श्रृंगारलतिका') सहित कुछ अन्य कवियों को भी सम्मिलित करते हैं । इन

कवियों को इस धारा में रखने के विषय में साहित्य इतिहासकारों में पर्याप्त मतांतर है, लेकिन **बिहारी** इस धारा के निर्विवाद कवि माने जाते हैं ।

रीतिसिद्ध कवियों की यह विशेषता मानी जाती है कि इनकी रचनाओं में भावपक्ष और कलापक्ष में एक ऐसा संतुलन दिखाई देता है, जो रीतिबद्ध कवियों के यहाँ नहीं मिलता । रीतिसिद्ध कवियों का प्राथमिक ध्येय आचार्यत्व के तत्वों का निरूपण नहीं होता, बल्कि सफल अभिव्यक्ति उनकी प्राथमिकता होती है । इसके अतिरिक्त काव्य की शास्त्रीय परंपरा का भी वे पर्याप्त ध्यान रखते हैं, इसलिए स्वाभाविक रूप से उनकी कविताओं में भाव और पारंपरिक काव्यशास्त्रीय शिल्प का सुंदर संतुलन दिखाई देता है । इस बात की पुष्टि के लिए बिहारी की रचनाओं में से एक उदाहरण देखिए :**"कनक-कनक ते सौ गुनी, मादकता अधिकाय ।/ वह खाए बौराय नर, यह पाए बौराय ।"**

इस दोहे में यमक अलंकार का बहुत ही प्रभावी प्रयोग किया गया है । इसमें 'कनक' शब्द लगातार दो बार प्रयुक्त हुआ है । यहाँ पहले कनक का अर्थ है 'धतूरा' और दूसरे कनक का अर्थ है 'सोना' । इस कविता का भाव अथवा आशय यह है कि धतूरे से सोने की मादकता सौ गुना अधिक है । धतूरे को तो मनुष्य खाने के बाद बौराता है, लेकिन सोना तो सिर्फ प्राप्त कर लेने भर से मनुष्य बौरा जाता है ।

2.2.3 रीतिमुक्त काव्यधारा

उत्तर मध्यकाल में जब रीति का अनुसरण करते हुए प्रचुर मात्रा में रचनाएँ की जा रही थीं, तब उसी दौर में कई कवियों ने रीति के अनुसरण की बाध्यता से खुद को मुक्त रखा और अपनी कविताओं का उद्देश्य उसके भावपक्ष की सफलता को ही माना । इसे इस तरह भी कह सकते हैं कि रीतिमुक्त काव्यधारा के कवियों ने सफल अभिव्यक्ति मात्र को ही अपना ध्येय माना और इसके मार्ग में यदि काव्य कला के बने-बनाये मानक उन्हें बाधा स्वरुप दिखाई पड़े, तो उन्हें उनका त्याग करने में भी हिचक नहीं हुई । इसी स्वच्छंद वृत्ति के कारण रीतिमुक्त काव्यधारा को कुछ साहित्य इतिहासकार 'स्वच्छंद काव्यधारा' की भी संज्ञा देते हैं । रीतिमुक्त काव्यधारा के कवियों ने कविता के विषय में इस पूर्वाग्रह को खंडित करते हुए यह स्थापित किया कि कविता मूलत: शास्त्रीय कर्म नहीं है, बल्कि उसका सम्बन्ध भाव और संवेदना से अधिक है । इस धारा के प्रमुख कवियों में **आलम** (कृति : 'आलमकेलि')**, ठाकुर** (प्रमुख कृतियाँ : 'ठाकुरशतक', 'ठाकुर ठसक') **, घनानंद** (प्रमुख कृतियाँ : 'सुजानसागर', 'विरहलीला', 'रसकेलिवल्ली' आदि)**, बोधा** (प्रमुख कृतियाँ : "विरहवारीश", 'इश्कनामा') आदि के नाम लिए जाते हैं ।

इस धारा के कवियों में घनानंद सर्वाधिक सजक और सचेष्ट कवि माने जाते हैं । रीतिबद्धता अथवा रीतिसिद्धता के प्रति उनके प्रतिकार को उनकी एक प्रसिद्ध पंक्ति में स्पष्ट रूप

से महसूस किया जा सकता है, जिसमें उन्होंने लिखा है – **'लोग तो लागि कवित्त बनावत मोहिं तौ मेरे कवित्त बनावत'** ।

इसी तरह इस धारा के एक अन्य कवि ठाकुर ने एक पंक्ति में कविता को बनावट भर और सभा में सुनाकर वाहवाही लूटने का विषय समझने पर एक तीक्ष्ण व्यंग्य करते हुए लिखा है कि ऐसे लोगों ने कविता को खेल समझ रखा है- **'ढेल सो बनाय आय मेलत सभा के बीच/लोगन कवित्त कीन्हों खेल करि जान्यो है ।'**

भावपक्ष पर केन्द्रित होने के कारण रीतिमुक्त कवियों को इस बात का अधिक अवसर मिला कि वे कविताओं में मानवता और जीवन के कोमल पक्षों के प्रति अपनी निष्ठा व्यक्त कर सकें । इन कवियों के यहाँ इसलिए एक तरह की उदात्तता लक्षित की जाती है । यह उदात्तता भी मानवीय है, इसे अलौकिक नहीं कहा जा सकता । इस धारा के कवियों ने स्त्री-देह का वस्तुकरण नहीं किया है, लेकिन इन्होंने प्रेम में देह-पक्ष का निषेध भी नहीं किया है । इसी प्रवृत्ति के कारण इनकी कविताओं में स्त्री महज़ एक देह बनकर नहीं रह जाती है, बल्कि अपनी सम्पूर्ण गरिमा के साथ उपस्थित होती है ।

इन कवियों में प्रेम और अन्य मानवीय मूल्यों के प्रति अनन्य निष्ठा दिखाई देती है । उदाहरण के लिए घनानंद की एक पंक्ति ली जा सकती है, जिसमें वे कहते हैं कि प्रेम का मार्ग बहुत ही सीधा है जिसपर सिर्फ सच्चे लोग अपना अहंकार त्याग कर चलते हैं, लेकिन इस मार्ग पर कपटी और शंकालु लोगों को चलने में बहुत ही झिझक होती हैं :

"अति सूधो सनेह को मारग है, जहाँ नेकु सयानप बाँक नहीं ।

तहाँ साँचे चलैं तजि आपनपौ झिझकैं कपटी जे निसाँक नहीं ।"

2.3 रीतिकाल की अन्य काव्य धाराएँ

2.3.1 प्रशस्ति या वीरकाव्य

2.3.2 नीतिकाव्य

2.3.3 भक्ति काव्य

रीतिकाल में 'रीति' केन्द्रित मुख्यतः तीन धाराओं के अतिरिक्त तात्विक विशेषताओं के कारण कुछ अन्य काव्य धाराएँ भी लक्षित की जाती हैं । इन काव्यधाराओं को विभिन्न इतिहासकारों ने भिन्न-भिन्न रूपों में लक्षित किया है । इस कारण से रीतिकाल की अन्य काव्य धाराओं में कई धाराओं की चर्चा मिलती है । इनमें से तीन मुख्य काव्यधाराओं की यहाँ चर्चा की जा रही है ।

2.3.1 प्रशस्ति या वीरकाव्य

हिंदी साहित्य के इतिहासकारों ने हिन्दी साहित्य के आदिकाल में जिस वीरकाव्य की परम्परा, रासो ग्रन्थ अथवा प्रशस्ति काव्य का उल्लेख किया है, उस परम्परा का अनुसरण उत्तर मध्यकाल के दरबारी कवियों में भी दिखाई देता है । **भूषण, श्रीधर, लाल, सूदन** और **पद्माकर** सहित कुछ अन्य कवियों ने वीरकाव्य अथवा प्रशस्तिकाव्य की रचना की । **भूषण** ने अपने आश्रयदाता शिवाजी और छत्रसाल को अपने प्रशस्ति ग्रन्थ का नायक बनाया । उन्होंने 'शिवराजभूषण' नाम का ग्रन्थ शिवाजी की प्रशस्ति में लिखा । इसमें शिवाजी की प्रशंसा और बादशाह औरंगज़ेब की निंदा की गयी है ।

इसी तरह **श्रीधर** ने अपने ग्रन्थ 'जंगनामा' में फर्रुखशियर और जहाँदार शाह के युद्ध का वर्णन किया है, यह एक युद्धकाव्य है ।

लाल कवि ने महाराज छत्रसाल की वीरता का बखान करने के लिए 'छत्रप्रकाश' नामक ग्रन्थ रचा । इस ग्रन्थ की खासियत यह है कि लाल कवि ने दोहा और चौपाई जैसे जिन छंदों का उपयोग किया है, वे वीर रस के पारंपरिक छंद नहीं माने जाते । तुलसीदास ने दोहे और चौपाई के आधिक्य वाले 'रामचरितमानस' में वीर रस का अधिकतर वर्णन अन्य छंदों में किया है ।

सूदन ने अपने ग्रन्थ 'सुजानचरित्र' में भरतपुर के महाराजा बदनसिंह के पुत्र सुजानसिंह (सूरजमल) के द्वारा लड़े गये युद्धों का विस्तृत वर्णन किया है ।

पद्माकर ने **'हिम्मतबहादुर-विरुदावली'** में बांदा के नवाब के सरदार हिम्मतबहादुर के वीर कृत्यों का वर्णन किया है ।

इस काव्यपरम्परा के अन्य कवियों में **घनश्याम शुक्ल, मोहनलाल भट्ट, हरिकेश, भगवंत राय, शम्भुनाथ, मल्ल, मून, भूधर, नाथ, भानकवि, थानकवि, पंडित प्रवीण, लछिराम** आदि हैं ।

इस विषय में कोई मतभेद नहीं हो सकता कि प्रशस्तिकाव्य अथवा वीरकाव्य की इस परम्परा का मूल कारण कवियों का राजाओं के प्रश्रय में रहना था । इस तरह की कविताओं का मुख्य ध्येय आश्रयदाता राजाओं की प्रशंसा कर उन्हें प्रसन्न करना था । इसी तरह ओज गुण की कविताएँ लिखकर वे कवि युद्ध की स्थिति को ध्यान में रखकर राजाओं का मनोबल बढ़ाने का काम करते थे । कुछ स्थितियों में यह भी कहा जा सकता है कि वे आश्रयदाता राजाओं की युद्धलिप्सा को प्रोत्साहित भी किया करते थे ।

रामचंद्र शुक्ल के अनुसार इन कविताओं में युद्धवीरता और दानवीरता दोनों की बड़ी अतियुक्तिपूर्ण प्रशंसा भरी रहती थी । आगे उन्होंने लिखा है कि इस तरह की कविताओं में वही कविताएँ बच सकीं जो उन आश्रयदाता राजाओं की प्रशंसा में लिखी गयीं जो वास्तव में प्रजा की श्रद्धा के पात्र थे ।

2.3.2 नीतिकाव्य

रीतिकाल में नीति के पद्य लिखने वाले कवि भी हुए हैं। आचार्य रामचंद्र शुक्ल इन्हें कवि कहने की बजाय 'सूक्तिकार' कहना अधिक उचित मानते हैं। तुलसीदास के समकालीन कवि अब्दुर्रहीम खानखाना जो रहीम के नाम से प्रसिद्ध हैं, उनके नीतिकाव्य बहुत लोकप्रिय रहे और वे अब तक लोगों की ज़ुबान पर हैं। तुलसीदास की रचनाओं में भी नीति के पद दिखाई देते हैं। उदाहरण के लिए 'रामचरितमानस' की यह पंक्ति देखी जा सकती है – **"सठ सन बिनय कुटिल सन प्रीति । सहज कृपन सन सुंदर नीति ।। / ममता रत सन ज्ञान कहानी । अति लोभी सन बिरती बखानी ।। / क्रोधिहि सम कामिहि हरिकथा । उसर बिज बए फल जथा ।"**

कहा जा सकता है कि रीतिकाल में जो नीतिकाव्य की परम्परा दिखाई देती है, उसकी जड़ें भक्तिकाल में और संस्कृत काव्यपरम्परा में भी रही हैं। नीति के पद्य सामान्यत: जीवन के अनुभवों से जुड़े हुए होते हैं और वे सांसारिक व्यवहार को लेकर सिद्धांत स्थापित करने वाले होते हैं। रीतिकाल के नीतिकाव्य इस कसौटी पर कितने खरे उतरते हैं, यह अवश्य विचार का विषय है।

रामचंद्र शुक्ल ने रहीम के ऐसे दोहों पर बात करते हुए लिखा है कि रहीम के दोहे कोरी नीति के पद्य नहीं हैं, उनमें मार्मिकता है, उनके भीतर से एक सच्चा ह्रदय झांकता है। लेकिन इसी प्रसंग में उन्होंने रीतिकाल के नीतिकवियों वृन्द और गिरिधर के नीतिपद्यों को कोरी नीति के पद्य कहा है। इसका अर्थ यह हुआ कि रीतिकाल में सामान्यत: नीति के पद्य औपचारिकता के निर्वाह के लिए लिखे गये न कि जीवन के मर्म को पर्याप्त संवेदनशीलता के साथ स्थापित करने के लिए। यह बात सही है कि रीतिकाल के नीतिकवियों की कविताओं की कोटि बहुत उच्च नहीं मानी जा सकती, लेकिन ऐसा भी नहीं कहा जा सकता कि ये कविताएँ पूरी तरह से महत्त्वहीन हैं। कहीं-कहीं इन रचनाओं में भी जीवनानुभव के निचोड़ दिखते हैं। उदाहरण के लिए गिरिधर कविराय की इन पंक्तियों को देखिए – **"पानी बाढो नाव में, घर में बाढो दाम । /दोनों हाथ उलीचिए, यही सयानो काम॥"**

इस बात में कोई संदेह नहीं है कि रीतिकाल के अधिकांश नीतिकाव्यों पर सामंती मूल्यबोध हावी है। इन कवियों का दरबारी कवि होने के कारण भी यह स्वाभाविक है । उदाहरण के लिए बैताल कवि का एक छप्पय देखिये जो स्त्री विरोधी नज़रिए से लिखा गया है, और स्त्रियों के लिए बेहद अपमानजनक है- **"राजा चंचल होय, मुलुक को सर करि लावै ।/ पंडित चंचल होय, सभा उत्तर दै आवै ।।/ हाथी चंचल होय, समर में सड़ि उठावै ।/ घोड़ा चंचल होय, झपट मैदान देखावै/ ये चारों चंचल भले, राजा पंडित गज तुरी ।य 'बैताल' कहै विक्रम सुनो, तिरिया चंचल अति बुरी ।"**

2.3.3 भक्तिकाव्य

ऐसा नहीं है कि रीतिकाल में भक्तिकाव्य की परम्परा लुप्त हो गयी हो । इस काल में कुछ कवियों ने विशुद्ध रूप से भक्ति रचनाएँ भी कीं । यहाँ यह स्पष्ट करना बहुत ज़रूरी है कि राधा और कृष्ण को अवलंब बनाकर जो श्रृंगार काव्य रीतिकालीन कवियों ने लिखे उन्हें भक्तिकाव्य की श्रेणी में नहीं रखा जाता, क्योंकि ऐसी मान्यता रही है कि अधिकांश कवियों ने अपने आश्रयदाता के जीवन चरित को दर्शाने अथवा अपनी श्रृंगार भावना को अभिव्यक्त करने के लिए कृष्ण-राधा के अवलंब का उपयोग भर किया । रीतिकाल में जो भक्तिकाव्य की परम्परा रही उसे पृथक रूप में देखना ज़रूरी है । रामचंद्र शुक्ल के अनुसार इन कवियों ने भक्ति और प्रेमपूर्ण विनय के पद पुराने भक्तों के ढंग पर गाये हैं । भक्तिकालीन परम्परा इस काल में भी संतकाव्य, सूफीकाव्य, रामकाव्य और कृष्णकाव्य के रूप में सुरक्षित रही ।

इस धारा के प्रमुख कवियों में यारी साहब, दरिया साहब, पलटू साहब, गुरु तेगबहादुर, संत चरनदास, प्राणनाथ, कासिमशाह, नूरमोहम्मद, शेख़निसार, गुरु गोविन्द सिंह, जानकी रसिकशरण, भगवंतराय खीची, जनकराजकिशोरीशरण, नवल सिंह, विश्वनाथसिंह, रामप्रियाशरण, रसिकअली, गुमान मिश्र, ब्रजवासीदास, मंचित, नागरीदास, अलबेली, हितवृन्दावनदास, वृन्दावनदेव, सुंदरी कुंवरीबाई, बक्षी हंसराज श्रीवास्तव 'प्रेमसखी', कृष्णदास, रत्नकुंवरी आदि का उल्लेख किया जाता है ।

2.4 रीतिकालीन गद्य

यह गलत धारणा है कि गद्य-लेखन का प्रारंभ आधुनिक काल में हुआ । छिटपुट गद्य रचनाएँ भक्तिकाल में भी लिखी गयीं और रीतिकाल में भी । यह ज़रूर कहा जा सकता है कि परिपक्व गद्य रचनाएँ मुख्यत: आधुनिक काल से ही मिलनी शुरू हुईं, और भक्तिकाल और रीतिकाल में अधिकांश कच्ची गद्य रचनाएँ ही देखने को मिलती हैं, लेकिन अपवाद स्वरुप रामप्रसाद निरंजनी के 'भाषा योगवशिष्ठ' का उल्लेख किया जा सकता है, जिसके गद्य को आचार्य रामचंद्र शुक्ल भी परिमार्जित गद्य मानते हैं । इस काल में कुछ नाटक, कुछ कथा-कहानियाँ, कुछ टीकाएँ और कुछ वार्ताएँ आदि गद्य विधा में मिलती हैं । ब्रज-भाषा के अतिरिक्त खड़ीबोली में लिखे गये गद्य भी इस युग से मिलने प्रारंभ हो जाते हैं ।

2.5 सारांश

रीतिग्रंथकार कवि या रीतिबद्ध कवि उत्तर मध्यकाल के प्रतिनिधि कवि माने जाते हैं और इन्हीं रचनाकारों की रचनाओं की प्रवृत्ति यों को ध्यान में रखते हुए इस काल को रीतिकाल की संज्ञा दी गयी है । इसी प्रवृत्ति को केंद्र में रखकर रीतिबद्ध काव्यधारा के अतिरिक्त रीतिसिद्ध और रीतिमुक्त काव्यधारा का नामकरण किया गया । इस नामकरण को लेकर साहित्य

इतिहासकारों में थोड़ा-बहुत मतान्तर देखा जा सकता है, लेकिन सामान्यत: उपरोक्त नामकरण व विभाजन ही स्वीकृत है ।

रीतिकाल की मुख्य काव्यधाराओं के लिए सामान्यत: यही नाम स्वीकृत हैं, लेकिन रीतिकाल में तत्वत: कुछ अन्य धाराएँ भी गौण रूप से विद्यमान रहीं जिनमें नीतिकाव्य, प्रशस्ति या वीरकाव्य और भक्तिकाव्य की धारा प्रधान है । कुछ कवि ऐसे भी हुए हैं जो इन धाराओं में से एकाधिक धाराओं में अपना स्थान रखते हैं । कुछ साहित्य इतिहासकार इसमें हास्यकाव्य, नाट्यकाव्य, अनुवाद काव्य, प्रकृति काव्य आदि धाराओं का भी उल्लेख करते हैं । रीतिकालीन साहित्य पर चर्चा करते हुए यह बात भी उल्लेखनीय है कि रीतिकाल में कुछ गद्य रचनाएँ भी मिलती हैं ।

2.6 बोध-प्रश्न

1. रीतिकाल की प्रमुख काव्य धाराएँ कौन-कौन सी हैं?
2. रीतिबद्ध काव्यधारा से क्या तात्पर्य है? और इसके प्रमुख कवि कौन-कौन हैं ?
3. रीतिसिद्ध काव्यधारा से क्या तात्पर्य है? और इसके प्रमुख कवि कौन-कौन हैं?
4. रीतिमुक्त काव्यधारा से क्या तात्पर्य है ?और इसके प्रमुख कवि कौन-कौन हैं?
5. रीतिकाल की गौण धाराओं में मुख्यत: कौन-कौन सी धाराएँ आती हैं? विशेषता सहित समझाएं ।
6. रीतिकाल में गद्य साहित्य की भी रचना हुई, इस कथन को स्पष्ट करें ।

2.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. खंड- 2.3 देखें ।
2. खंड- 2.3.1 देखें ।
3. खंड- 2.3.2 देखें ।
4. खंड-2.3.3 देखें ।
5. खंड- 2.4 देखें ।
6. खंड- 2.5 देखें ।

2.8 पठनीय पुस्तकें

1. हिंदी साहित्य का इतिहास : आचार्य रामचंद्र शुक्ल
2. हिंदी साहित्य का अतीत : आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
3. हिंदी साहित्य का इतिहास : (सं.) डॉ. नगेन्द्र व डॉ. हरदयाल

4. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास : बच्चन सिंह
5. हिंदी साहित्य का सरल इतिहास : विश्वनाथ त्रिपाठी
6. हिन्दी रीति साहित्य : भगीरथ मिश्र
7. रीतिकाल की भूमिका : नगेन्द्र
8. रीतिकालीन साहित्य का पुनर्मूल्यांकन : रामकुमार वर्मा